INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 6.865 (SJIF 2023)

सल्तनत की स्थापना के अवसर पर दोआब का राजनैतिक परिदृश्य

(Political scene of the Doab on the occasion of the establishment of the kingdom)

डॉ. मानवेंद्र प्रताप सिंह
शिक्षक
एच. बी. इंटर कॉलेज, अलिगड

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/09.2023-28486779/IRJHIS2309003

प्रस्तावना :

सल्तनत कालीन दोआब (1206–1526) के बारे में जब तथ्यों का विश्लेषण करते है तो यह तथ्य भी परिलक्षित होता है कि क्षेत्रीय राजा क्षत्रप, राय, आदि ने पर्याप्त संघर्ष किया लेकिन आपसी वैमनस्यता एवं एक दुसरे को नीचा दिखाने की प्रवृति के कारण दुश्मन तुर्की सेना का लक्षित विरोध करने में असफल रहे फिर भी तथाकथित कुछ इतिहासकारों ने तो यह तथ्य स्थापित करने में ही अपनी उर्जा लगा दी कि आक्रमण होते ही संपूर्ण भारत वर्ष सल्तनत के अधीन हो गया था, जबकि सत्य यह है कि प्रत्येक क्षेत्र में लगातार संघर्ष हुआ। क्षेत्रीय क्षत्रप राजधराने एवं क्षेत्रीय नेता लगातार संघर्षरत रहे, परिणामस्वरूप सुल्तान एक दिन भी चैन से नही बैठ पाया था।

हिन्दूशाही राज्य के विनाश के परिणामस्वरूप तुर्की आक्रमण का प्रवाह हिन्दुस्तान को रौंदने के उद्देश्य से आगे बढा। सर्वाधिक लाभ प्राप्त करने के अवसर को पूर्ण रूप से प्राप्त करने के लिए महमूद गजनवी ने अपनी सेनाओं का रूख गंगा–यमुना के दोआब की ओर कर दिया। महमूद ने आक्रान्ता की भांति लूटमार करते हुए न केवल मथुरा, वृन्दावन अपितु कन्नौज तक क्षेत्र को लूटने के अतिरिक्त उजाड़ करने का हर संभव प्रयास किया। मंदिरों को नष्ट कर दिया। लूट,हत्या एवं बलात्कार द्वारा समस्त क्षेत्र को भयभीत करने का सफल प्रयास किया। उसके इस आक्रमण से गंगा–यमुना का दोआब रक्तरंजित हो गया।क्षेत्रीय राजाओं एवं नागरिकों ने पहली बार किसी क्रुरतम लुटेरे एवं आतातायी को देखा था। वह वायु के वेग से लूटमार और हत्याकांड करता हुआ आया और उसी वेग से वापस लौट गया। क्षेत्रीय राजा अथवा जनता को संभलने अथवा प्रतिरोध का अवसर ही नहीं मिल पाया, क्योंकि वे इस प्रकार के आक्रमण लिए तैयार नहीं थे।

वास्तव में एक सुल्तान अथवा शासक के रूप में दोआब में उसका कोई स्थान इतिहास में कहीं दृष्टि गोचर नहीं होता। हिन्दू शाही राजवंश के पतन के बाद पंजाब को उसने भौगोलिक, सैनिक तथा सामाजिक कारणों से अपने राज्य में मिलाया क्योंकि इस प्रदेश पर अधिकार किये बिना

उसके यातायात का मार्ग सुरक्षित नहीं रह सकता था और न वह निर्भयता पूर्वक गंगा–यमुना के दोआब को पदाक्रांत कर सकता था फिर भी यह प्रमाणतः सत्य है कि महमूद ने भारत में तुर्की सत्ता की नींव डाली क्योंकि उसने दिल्ली की भावी सल्तनत की संस्थापना के अवरोधों को समाप्त कर दिया। 11 वीं शताब्दी के प्रारम्भ से लगभग 1186 ई0 तक पंजाब गजनवी साम्राज्य का ही अंग बना रहा। लाहौर इसकी राजधानी बना रहा। इस प्रकार सिंध के बाद यह दूसरा मुस्लिम राज्य बन गया था।

भारत के आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से मजबूत क्षेत्र दोआब के क्षेत्रीय राजाओं में अपनी आपसी खींचतान एवं स्वंय को ही शक्तिशाली मानने के अंहकार के कारण महमूद गजनवी के आक्रमण के समय दोआब अत्यन्त पीड़ादायी प्रकार से अपमानित हो चुका था। मौहम्मद गौरी जो पंजाब एवं उत्तर–पश्चिमी सीमा पर प्रायः गजनी सत्ता की मजबूती के लिये आक्रमण करता था, का भटिण्डा पर अधिकार था परन्तु पृथ्वीराज द्वितीय ने भटिण्डा पर आक्रमण कर उसे अपने अधिकार में ले लिया इस प्रकार चौहान राज्य की सीमायें उत्तर में आधुनिक फिरोजपुर तक फैल गयी। अजमेर के राजा पुथ्वीराज चौहान तृतीय अथवा महान पृथ्वीराज चौहान जिसने दिल्ली के तौमर शासकों को परास्त कर दिल्ली अपने राज्य में मिला लिया था, को अब उत्तर पश्चिम की ओर से तुर्की आक्रमण के प्रति सावधान रहना था। मुहम्मद गौरी लगातार दिल्ली और दोआब पर आक्रमण कर न केवल धन सम्पदा बल्कि अपनी साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षा को पूरा करना चाहता था।

गोर से आने वाली आक्रमणकारी सेनाओं का प्रथम प्रहार अजमेर के चौहान नरेश को झेलना पड़ा। उसका राज्य अजमेर से लेकर दिल्ली तक फैला हुआ था इसलिए देश की उत्तर–पश्चिमी सीमाओं की सुरक्षा का उत्तरदायित्व उसी पर था। उत्तर–पश्चिमी से होने वाले संभावित आक्रमणों के विरूद्ध भारत के सिंहद्वार की रक्षा करने के लिए चौहानों ने भटिण्डा तक अपने राज्य के सीमान्त नगरों की सुदृढ़ किलेबंदी कर ली थी, मौहम्मद गौरी ने पहला आक्रमण भटिण्डा पर किया और 1189 ई0 में उसे घेर लिया। ऐसा प्रतीत होता है कि पृथ्वीराज तैयार नहीं था, और आक्रमण भी धोखे से किया गया था, अतः नगर की रक्षा सेना को पराजित होकर हथियार डालने पड़े।

किले की रक्षा के लिए मुहम्मद ने जियाउद्दीन नामक सेनापति की अधीनता में सैनिक नियुक्त कर दिये, किन्तु जैसे ही सुल्तान वापस जाने को तैयार हुआ, पृथ्वीराज किले को छीनने के उद्देश्य से सेना लेकर पहुँच गया। तत्कालीन मुस्लिम इतिहासकारों के अनुसार, पृथ्वीराज की सेना में दो लाख अश्वारोही और तीस हजार हाथी थे किन्तु यह कथन निश्चित ही अतिरंजित प्रतीत होता है। वीर चौहान का सामाना करने के लिये मुहम्मद को फिर मुड़ना पड़ा। 1191 ई0 में भटिण्डा के पास तराईन गांव के मैदान में दोनों सेनाओं में युद्ध हुआ। पृथ्वीराज की सेनाओं ने सुल्तान पर भयंकर प्रहार किये। ''सुल्तान ने दिल्ली के गोविन्द राय के हाथी पर भाले का वार किया। सुल्तान दूसरा रूस्तम था और अपने समय का सिंह था। उसका भाला गोविन्दराय के मुख में घुस गया। राय ने भी वार किया तो सुल्तान की बाँह पर घाव हो गया। सुल्तान ने अपना घोड़ा वापस मोड़ा उसका दर्द इतना असहनीय था कि वह अपने को घोड़े पर नहीं संभाल सका। मुसलमान सेना हार गयी और नेतृत्व में नहीं रखी जा सकी''1 गौरी घोड़े से गिरने ही वाला था कि एक ''खिलजी युवक ने उसको पहचान लिया और उछलकर

सुल्तान के पीछे बैठ गया और उसको संभाल लिया और युद्ध में से उसको निकाल लिया।''

तराईन के प्रथम युद्ध में भारत के हिन्दू राजाओं के हाथों पराजय से पूर्व मुहम्मद को अन्हिलवाड़ के भीमदेव ने भी उसे परास्त किया था परन्तु उससे भी अधिक अपमान उसे इस हार के कारण झेलना पड़ा अतः गजनी लौटने पर वह कभी सुख से नहीं सोया और सदैव चिन्ता एवं वेदना में लिप्त रहा। इस हार का बदला लेने के लिए उसने भीषण तैयारियां की और जब वे पूरी हो गयी तो एक लाख बीस हजार चुनी हुई अश्वारोही सेना को लेकर भारत की ओर चल पड़ा। लाहौर पहुँचकर उसने किवाम उल–मुल्म नामक अपने दूत को पृथ्वीराज के पास भेजा और उससे अपनी अधीनता स्वीकार करने को कहा। अपनी तैयारियां पूरी करने एवं पृथ्वीराज को धोखे में डालने के उद्देश्य से मुहम्मद ने यह चाल चली थी, किन्तु चौहान नरेश को आसानी से मुर्ख नहीं बनाया जा सकता था। वह तुरन्त ही भटिण्डा की ओर चल पड़ा और अन्य राजपूत राजाओं को भी अपनी सहायता के लिए आमंत्रित किया। सम्मिलित सेना को लेकर जिसमें (मुस्लिम इतिहासकर फरिश्ता के अनुसार) पाँच लाख घुड़सवार और तीन हजार हाथी थे (यह गणना निश्चित ही अतिरंजित होगी), पृथ्वीराज ने तराईन के ही युद्ध क्षेत्र में आक्रमणकारी का पुनः मुकाबला किया। मुहम्मद ने अपनी सेना को पाँच भागों में विभक्त किया। चार को उसने राजपूतों पर चारों ओर से आक्रमण करने को भेजा और एक को रिजर्व में रखा। तत्कालीन इतिहासकर मिनहाज–उस–सिराज के अनुसार सुल्तान ने अपनी सेना को योजनानुसार युद्ध के लिए नियोजित किया। उसके मुख्य अंग को जिसके पास झंडे, शामियाने, हाथी आदि बड़ी संख्या में थे, उसने पीछे रखा। युद्ध की योजना पूर्ण रूप से निश्चित करके वह सावधानी से आगे बढ़ा, घुड़सवारों को जिनके पास भारी हथियार नहीं थे, उसने दस–दस हजार की चार टुकड़ियां में बांटा और दायें–बायें तथा आगे–पीछे चारों ओर से शत्रु पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया। जब शत्रु ने आक्रमण करने के लिए अपनी सेना इकट्ठी की, तब इन अश्वारोही टुकड़ियों ने एक दुसरे को सहायता दी और पूरे जोश से उस पर धावा बोल दिया इस रणनीति से मूर्तिपूजक–हिन्दूओं की पराजय हुई। गौरी विजयी हुआ और शत्रु सेनायें छिन्न–भिन्न हो गई। राजुपूतों ने अत्यन्त वीरता से युद्ध किया किन्तु मुहम्मद की युद्ध नीति के आगे वे जब चारों ओर के प्रहारों को झेलते हुये थक गये तो संध्या समय मुहम्मद ने अपनी आरक्षित टुकडियों को उन पर आक्रमण करने के लिए भेजा। इस अंतिम प्रहार को राजपूत योद्धा न झेल सके। पृथ्वीराज का सेनापति खांडेराव जिसने तराइन के प्रथम युद्ध में गौरी को पराजित किया था, मारा गया और पृथ्वीराज का भी उत्साह भंग हो गया। पृथ्वीराज चौहान अपने हाथी को छोड़ एक घोड़े पर सवार हुआ और युद्ध किया, लेकिन दुर्भाग्य से पराजित हुआ, मुहम्मद गौरी की विजय हुई। इन दो युद्धों ने भारत के नरेशों को झकझोर दिया और परिणाम स्वरूप दोआब की धरती कांप उठी। अब तक जो सारे आघात दोआब से ऊपर हो रहे थे अब इनका सामना करनेकी बारी दोआब एवं क्षेत्रीय शासकों पर स्वयं आ पड़ी।

बुलन्दशहर, मेरठ तथा दिल्ली पर आक्रमण :

इस महत्वपूर्ण सफलता के बाद गौरी विजित स्थानों को ऐबक की अधीनता में छोड़ कर गजनी को लौट गया। उसकी अनुपस्थिति में अजमेर में भयंकर विद्रोह हुआ जिसमें चौहानों ने अपनी स्वधीनता पुनः प्राप्त करने तथा तुर्को को मार भगाने का प्रयत्न किया और जटबन नामक हिन्दू सरदार ने हाँसी में तुर्की

सेना को घेर लिया। ऐबक वहाँ पहुँचा, विद्रोही को पराजित किया और बागंड़ के पास युद्ध में उसकी हत्या कर दी गयी। इसके बाद ऐबक ने धोखे से डोर राजपूतों को हराकर उसने बुलन्दशहर अथवा बरन छीन लिया। डोर सरदार चंद्र सेन का एक संबधी अजयपाल, ऐबक से जा मिला और उससे भारी रिश्वत् लेकर इस प्रकार दोआब की धरती पर विदेशी आक्रान्ताओं का पहली बार तुर्क सत्ता को स्थापित करने का प्रयास सफल हुआ और गंगा–यमुना के पानी से सिंचित भूमि रक्तरंजित हो गयी। उस समय उत्तर भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली राज्य कन्नौज था जिसका राजा जयचन्द्र था। तुर्को का भी मानना था कि इस क्षेत्र में स्थायी राज्य स्थापित करना है तो जयचन्द्र को परास्त करना आवश्यक है और इसीलिए मौहम्मद गौरी कन्नौज पर आक्रमण के लिए वापस आया। राय जयचन्द्र उस समय उत्तर भारत का सर्वाधिक शक्तिशाली राजा माना जाता था ''न केवल गहड़वाल शिलालेख बल्कि भारतीय साहित्यकार एवं मुस्लिम इतिहासकर भी जयचन्द्र की सैनिक शक्ति के साक्ष्यों को स्वीकारते हैं''5 उधर संघर्षो में उलझा था। मुहम्मद गौरी के साथ ऐबक भी कन्नौज एवं बनारस के राय जयचंद्र के विरूद्ध युद्ध के लिए सम्मिलित सेना में शामिल हो गया। दोआब में कुतुबुद्दीन ऐबक राजपूतों के साथ ऐबक भी कन्नौज एवं बनारस के राय जयचन्द्र के विरूद्ध युद्ध के लिये सम्मिलित सेना में शामिल हो गया।

विशाल सम्मिलित सेना में ''कवचधारी 50,000 सवार थे इसके साथ वह बनारस के राय से लड़ने के लिए प्रयाण करने लगा। बादशाह ने कुतुबुद्दीन को आदेश दिया कि वह अग्रसेना के साथ, जिसमें 1000 सवार थे''6 युद्ध में जयचन्द्र की अग्रसेना संघर्ष के पश्चात पराजित हुई तो राय जयचन्द्र तुर्की सेना को रोकने के लिए आगे बढा। इटावा व आगरा के मध्य यमुना नदी के किनारे चन्दवार (वर्तमान फिरोजाबाद) में दोनों सेनायें आमने–सामने थीं। तुर्की सेना राय जयचंद्र को देखकर हतोत्साहित थी क्योंकि ''बनारस का राय जयचन्द्र मूर्ति पूजा और अनन्त मृत्यु का सरदार था। उसकी सेना रेत के कणों के समान अगणित थी''7 राय जयचन्द्र ने शत्रु गौरी की सेना पर घातक प्रहार किये। गौरी की सेना लगभग हतोत्साहित हो चुकी थी। तभी जयचन्द्र को ''एक घातक वाण लगा जिसके कारण वह हौंदे से भूमि पर गिर पड़े''8 संभवतः राय जयन्द्र की भी मृत्यु हो गयी। कन्नौज बनारस की सेना जो विजय को निश्चित मान रही थी, छिन्न–भिन्न हो गयी। सेना में राय जयचन्द्र की मृत्यु से भगदड़ मच गयी। मुहम्मद गौरी ने भी विजय नहीं कर पाये जयचन्द्र के वंशज उसके राज्य के एक छोटे भाग पर शासन करते रहे क्योंकि उस समय जीतने योग्य मुहम्मद में शक्ति नहीं थी, ऐसा प्रतीत होता है कि कन्नौज जीतने पर भी तुर्क उस पर बहुत दिनों तक अधिकार कायम नहीं रख सके और गहड़वालों ने उसे शीघ्र ही फिर जीत लिया था''9

इस प्रकार प्रमाणतः यह ज्ञात होता है कि उस समय वास्तव में तुर्की सेना ने दोआब क्षेत्र के योद्धाओं से लगातार संघर्ष किया और विद्रोह करने वालों को लगातार परास्त करने का और स्वतन्त्रता के संघर्षो को निरन्तर दबाने का प्रयत्न करते रहे , लेकिन संघर्षो को पूर्णतः शांत नहीं कर सके और यह सतत् संधर्ष की चिंगारी क्षेत्रीय नागरिकों के छोटे–छोटे समूह के रूप में लगातार क्षेत्रीय लोगों को संघर्ष के लिए प्रेरित करती रही, क्योंकि वहाँ न तो कोई बड़ा शासक बचा था, ना ही उन पर उस प्रकार के संसाधन थे किवे तुर्की सेना की सामूहिक शक्ति एवं संसाधन संपन्नता का सीधा प्रतिरोध कर पाते स्वाभिमान एवंअपनी भूमि को पुनः अर्जित करने की भावना लगातार उन्हें संघर्ष के लिए प्रेरित करती रही।

संदर्भ ग्रंथ :

1. तबकात–ए–नासिरी : मिनहाज–उस–सिराज–तबकात–19, शन्सबनिया सुल्तान गजनी (मुद्धित मूल 111) भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–215
2. तबकात–ए–नासिरी : मिनहाज–उस–सिराज–तबकात–19, शन्सबनिया सुल्तान गजनी (मुद्धित मूल 111) भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–215
3. तबकात–ए–नासिरी : मिनहाज–उस–सिराज–तबकात–19, शन्सबनिया सुल्तान गजनी (मुद्धित मूल 111) भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–216
4. द हिस्ट्री ऑफ गहड़वाल डायनेस्टी–रोमा नियोगी, पृष्ठ–109
5. ताज–उल–मआसिर : हसन निजामी
भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–162
6. ताज–उल–मआसिर : हसन निजामी
भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–162
7. ताज–उल–मआसिर : हसन निजामी
भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–162
8. ताज–उल–मआसिर : हसन निजामी
भारत का इतिहास–खंड–2 : इलियट एंड डाउसन, पृष्ठ–162
9. कन्नौज का इतिहास : आनन्द स्वष्प मिश्र, पृष्ठ–504